शामे ग़रीबाँ

सफ़वतुल उलमा मौलाना सै० कल्बे आबिद साहब क़िब्ला

मौलाना कल्बे आबिद साहब[ता०स०] की यह मजलिस आल इण्डिया रेडियो स्टेशन लखनऊ से 10 मुहर्रम 1384[हि०] में प्रसारित हुई थी

इरशादे ख़ुदावन्दी है, कि अगर हक़ उनकी ख़्वाहिशों की पैरवी करने लगे तो ज़मीन और आसमान बर्बाद हो जाएं। यह अज़ीम काएनात अपनी सैकड़ों कहकशाओं करोड़ों आफ़ताबों, बेहिसाब सैय्यारों के साथ रवाँ-दवाँ है कब से है, ख़ुदा ही जाने, और कब तक रहेगी, उसी को मालूम है इस अज़ीम काएनात के एक ज़र्रा बेमिक़दार यानी ज़मीन के एक छोटे से हिस्से पर बसने वाली कमज़ोर मख़लूक़, इन्सान के छोटे से दिमाग़ में यह गुन्जाइश कहाँ, कि वह आलम की पिनहाइयों का एहसास भी कर सके। इसकी कमज़ोर अक़्ल और नातवाँ ज़हन में यह ताक़त कहाँ कि काएनात की वुस्अतों का तसव्वुर भी कर सके, जो अपने क़दमों के नीचे ज़मीन ही के राज़ों को आज तक न समझ सका, वह इस फैली हुई काएनात की हदों को हज़ार साल बाद भी क्या समझेगा और जो हदों को ही न समझ सके वह उन मक़सद और राज़ों को क्या मालूम कर सकेगा जो काएनात में छुपे हुए हैं

बस वह अकेला और वाहिद पैदा करने वाला है जो काएनात के निज़ाम का चलाने वाला है उसी के इशारे पर इतना बड़ा क़ुदरत का कारख़ाना चलता है, और चलता रहेगा न वह किसी से मशविरा लेता है और न उसे किसी की राय की ज़रूरत है, क़ुदरत के एक इशारे पर हवाएं चलती हैं दरिया बहते हैं, सूरज निकलता और डूबता है, चाँद अपनी मन्ज़िलें तय करता है, मौसम का आना जाना जारी है, जो क़ानून बना दिया, काएनात का हर ज़र्रा उसका पाबन्द है, इन्सान के लिए न तो मुमकिन ही है कि इन वजहों को समझ सके, और न उसको हक़ है कि मशविरा पेश करे।

फिर हमारी एक दूसरे से टकराती ख़्वाहिशें एक दूसरे से मुख़तलिफ़ तमन्नाएं, आपस में टकराते हुए मक़सद, कैसे मुमकिन है कि हर एक की चाहत पूरी हो, इसलिए इरशाद हुआ ***"हक़ अगर तुम्हारी चाहतों की पैरवी करता तो ज़मीन व आसमान और जो जो उसमें हैं, सब बर्बाद हो जाएं"*** वह तुम्हारी पैरवी करने वाला न होगा तुम पर ज़रूरी है कि उसकी पैरवी करो। जिस तरह निज़ामे तकवीनी में इन्सानी राय को दख़ल नहीं है, इसी तरह नज़्मे आलम क़ायम करने वाले ने इन्सानी दुनिया को फ़ितना व फ़साद से बचाने के लिए निज़ामे शरीअत भी मुक़र्रर फ़रमाया है, जिसमें हर एक के हुक़ूक़, हर शख़्स की ज़िन्दगी के लिए एक रफ़्तार, एक रास्ता और एक मंज़िल तय की गई है। जिस तरह लामहदूद फ़ज़ा में फिरने वाले सैय्यारे तय किये हुए रास्ते छोड़ दें तो टकरा-टकरा कर तबाह हो जाएं, इसी तरह इन्सान भी अपने रास्तों अपनी मन्ज़िलों को छोड़ दे तो अग़राज़ व मक़ासिद का टकराव, फ़ितना व फ़साद का सबब बन जायेगा।

आज दुनिया की तबाही व बर्बादी, बेअमनी और फ़साद का राज़ यही है, कि न लोग अपने हुक़ूक़ और ज़िम्मेदारियों का लेहाज़ करते हैं और न क़ौमें नतीजा यह है कि अफ़राद, अफ़राद से टकराते हैं, और क़ौमें, क़ौमों से टकराती हैं, मगर इसी अपना-अपनी के आलम, हुक़ूक़ का छीनना और ज़ुल्म व ज़्यादती के अन्धेर में, कुछ हक़ के चाहने वाले सच्चाई के अलमबरदार भी हैं जो ख़्वाहिशों के बन्दों से टकराते रहते हैं। यह हक़ और सदाक़त के नुमाइन्दे, दुनिया में हक़ का नूर फैलाने के लिये लगे हुए हैं, दूसरी तरह ख़्वाहिशें इन्सान की किसी

हद पर न रुकने वाली चाहतें हैं जो उन हक़ परस्तों को ज़िन्दा रहने का हक़ भी देने पर तैयार नहीं, इसी नज़रिये की नुमाइन्दगी करना है।

यह बात कि ताक़त, हक़ है जो बात भी किसी ज़ालिम व जाबिर डिक्टेटर की ज़बान से निकल जाए वही हक़ है, इसकी मुख़ालेफ़त बातिल है। हक़ के नुमाइन्दे कहते थे, हक़ हक़ है, बातिल बातिल, किसी बड़े से बड़े ज़बरदस्त के कहने से हक़, बातिल और बातिल, हक़ नहीं हो सकता, लेकिन ख़्वाहिशों के असीर माद्दी ताक़त के चाहने वाले, घमण्ड में चूर अफ़राद यह बर्दाश्त कर सकते थे कि उनकी मुख़ालेफ़त में कोई आवाज़ बुलन्द हो, जब वह कुछ कमज़ोर बेसहारा लोगों को अपने ज़ुल्म से बेपरवाह, और अपनी ताक़तों से बेख़ौफ़ होकर मुख़ालिफ़त की आवाज़ बुलन्द करते देखते थे तो झुंझला-झुंझला कर ज़ुल्म व सितम के तूफ़ान उठाते थे, वह कहते थे हम इस ज़बान को काट देंगे, इस गले को दबा देंगे और उस शख़्स को कुचल देंगे, जो हमारी चाहतों को ठुकरायेगा, यही कशमकश थी जो बातिल परस्तों और हक़ के नुमाइन्दों में क़ायम रही।

कभी आदम[अ०] व शैतान की सूरत में सामने आई, कभी हाबील व क़ाबील की सूरत में ज़ाहिर हुई, कभी बातिल परस्तों का नमरूद, और हक़ परस्तों की हिफ़ाज़त करने वाले इब्राहीम[अ०] नज़र आये, कभी यह कशमकश मूसा[अ०] और फ़िरऔन के टकराव की सूरत में सामने आई, नमरूद ने आग भड़काई, जिसको इब्राहीम[अ०] ने हंस कर गुलज़ार बनाया। मिस्र का फिरऔन जादूगरों की फ़ौज लेकर आया, मूसा ने असा का सहारा लिया, यही वह जंग थी, जिसके एक फ़रीक़ रिसालतमॉब[स०] और दूसरा अबूजहल और अबूलहब थे। एक तरफ़ ज़ुल्म व ज़्यादती की ताक़तें इकटठा थीं दूसरी तरफ बेयारी व मददगारी, पत्थर मारे जाते थे, बाइकाट कराया जाता था, हर ज़ुल्म जो बस में था ढाया जाता था। दौलत की, सरदारी की, नफ़्स की चाहतों को पूरा करने की लालच दी जाती थी। और उधर का जाना-पहचाना जवाब था कि मेरे एक हाथ पर सूरज और दूसरे पर चाँद रख दिया जाए तो भी हक़ के कलमे से अलग न हूँगा।

जब देखा कि कोई चाल कामयाब नहीं तो फिर ज़ुल्म व सितम की आँधियाँ चलीं, आख़िर वतन छोड़ने पर भी मजबूर किया गया, मदीने में भी चैन से न बैठने दिया गया, कभी रसूल[स०] को बद्र में उबैदा की क़ुबानी देना पड़ी, कभी ओहद में हमज़ा[अ०] की टुकड़े-टुकड़े लाश पर गिरया करना पड़ा। चढ़ाईयाँ होती रहीं, एक के बाद दूसरा हमला और शिद्दत से किया जाता रहा। मगर हर ज़ुल्म का नतीजा ज़ालिमों की उम्मीद के ख़िलाफ़ निकला। हक़ चमकता ही गया, निखरता ही गया। बातिल परस्त ज़ुल्म करते-करते थक गये, हक़ के नुमाइन्दे ज़ुल्म सहते-सहते न थके। जब मुकम्मल हार के आसार ज़ाहिर होने लगे तो बातिल ने जंग का तरीक़ा बदला, अब कुफ़्र ने इस्लाम की नक़ाब ओढ़ी, शिर्क ने निफ़ाक़ का पर्दा डाला। अल्लाह ने भी रसूल[अ०] को ख़बरदार किया, ऐ मेरे रसूल[स०]! अब तुझे दोतरफ़ा जंग करनी है, ***''कुफ़्फ़ार से भी जंग करो, मुनाफ़िक़ीन से भी''***।

यह हक़ व बातिल की लड़ाई रसूल[स०] ही पर ख़त्म नहीं हुई, हक़ के नुमाइन्दे ज़ुल्म और ज़्यादती की ताक़तों से टकराते रहे, हर सख़्ती बर्दाश्त करते रहे मगर कभी बातिल के सामने सर नहीं झुकाया। यहाँ तक कि हक़ की नुमाइन्दगी हुसैन[अ०] तक पहुँची और बातिल का नुमाइन्दा बनकर यज़ीद हुकूमत करने बैठा और वही पुराना मुतालबा, हक़ के नुमाइन्दे के सामने पेश हुआ ऐ हुसैन[अ०] बैअ़त कर लो। इमाम ने जो जवाब दिया, वह तारीख़ में मौजूद है ''मेरे जेसे यज़ीद जेसों की कभी बैअत नहीं करते'' इमाम ने यह नहीं फ़रमाया कि मैं बैअत नहीं करूँगा बल्कि इरशाद फ़रमाया कि जो भी मेरे ऐसे हैं, वह उसके ऐसों की कभी बैअत नहीं करते। इसी एक जुमले में हज़ारों साल की दास्तान छुपी है। जैसे फ़रमा रहे हैं, अगर आदम[अ०] ने शैतान से हार मान ली होती, अगर नूह[अ०] ने कुफ़्फ़ार के मुतालबे को माना होता, अगर इब्राहीम[अ०] ने नमरूदियत के सामने सर झुकाया होता अगर मूसा[अ०] ने फ़िरऔन के मुक़ाबले में शिकस्त मन्ज़ूर की होती, तो मैं भी यज़ीद की बैअत के मुतालबे को क़ुबूल कर लेता।

यह तो माज़ी की दास्तान है मुस्तक़बिल की तस्वीरें भी इसी आईने में झलक रही हैं, जैसे हुसैन[अ०] कह रहे थे कि मेरा ऐसा बैअत नहीं करता चाहे नाना का मज़ार छोड़ना पड़े, माँ की क़ब्र से जुदा होना हो, ख़ुदा के घर में भी पनाह न मिले इसी जुमले की वज़ाहत थी कि

हुसैन[अ०] ने 28 रजब को मदीना छोड़ा, 8 ज़िलहिज्जह को मक्का से ठीक हज के मौक़े पर रवाना हुए अब लू के थपेड़े हैं, अरब का रेगिस्तान है एक मुख़्तसर सा क़ाफ़िला अपने वादे की जगह की तरफ़ तेज़ी से जा रहा है, जिनमें ज़रा भी खोट है, उनको हर मंज़िल पर जुदा कर रहे हैं, जो हक़ परस्त हैं उनको कभी पैग़म्बर[स०] की शबीह को भेज कर ख़त लिख कर बुलाया जा रहा है। क़ाफ़िला मौसम की सख़्तियाँ बर्दाश्त करता बढ़ रहा है कि दो सवार नज़र आते हैं, जो दरयाफ़्त करने पर कहते हैं, मौला[अ०] कूफ़ा से इस वक़्त चले थे, जब आपके सफ़ीर (दूत) की मुक़द्दस लाश की कूफ़े में बेहुरमती की जा रही है। क़ाफ़िला कुछ और आगे बढ़ा, एक मंज़िल पर इमाम[अ०] ने हुक्म दिया जितनी मश्कें, छागलें बर्तन हैं, पानी से भर लिये जाएं। मसलेहत उस वक़्त खुली जब दुश्मन की प्यासी फौज ने राह रोकी। मेहरबानी और सख़ावत के सरचश्मे सरदार ने ताजदारे वफ़ा अलमदार से कहा भैय्या दुश्मन का लश्कर है तो क्या हुआ, मुझे क़ैदी बनाने के इरादे से आये हैं, तो इससे क्या, देखते नहीं हर सांस लेने वाला प्यास से बेहाल है। ऐ भैय्या मुझे गवारा नहीं कि कोई जानदार प्यास की तकलीफ़ बर्दाश्त करे प्यासों को पानी पिलाया गया। हुसैन[अ०] ने अपने आप से एक-एक से पूछा कि अब तो प्यास नहीं रही।

इमाम[अ०] की तरफ़ से सुल्ह की जो भी शर्तें रखी गईं सब रद्द की गईं, मगर ख़ुदा के रास्ते में बढ़ने वालों को कोई रोक सकता है, कोहनियों और हाथों से दुश्मन को हटाते हुए, राहे रिज़ा में बढ़ने वाले बढ़ रहे थे कि इमाम[अ०] के घोड़े के क़दम को कर्बला की ज़मीन ने चूमा, और हुसैन[अ०] का घोड़ा इस बड़े मरतबे वाली ज़मीन के एहतेराम में रुका, घोड़े बदले गये, मगर कोई भी आगे न बढ़ा। पूछने पर एक शख़्स ने कह दिया कि इसको कर्बला की ज़मीन भी कहते हैं। इमाम यह सुनते ही घोड़े से उतरे फ़रमाया ''यही वह ज़मीन है कि जहाँ हमारे ख़ेमे लगाये जाएंगे हमारे ख़ून बहाए जाएंगे हमें हर तरह ज़लील करने की कोशिश की जायगी।

मुहर्रम की दूसरी तारीख़ थी, जब हुसैनी क़ाफ़िले ने कर्बला में डेरा डाला। दिन पर दिन, रातों पर रातें गुज़रने लगीं, फ़ौजों की भीड़ बढ़ती गई। यहाँ तक कि मुहर्रम की सातवीं तारीख़ आई, मुसाफ़िरों पर पानी बंद करने का हुक्म दिया गया, दिन बदिन बच्चों की प्यास बढ़ने लगी, नौ मुहर्रम को हुसैन[अ०] हर तरफ़ से दुश्मनों में घिर गये, नवीं मुहर्रम को अस्र का हंगामा था कि ज़ालिम फ़ौज में हरकत हुई, इन्सानों का ठाठें मारता हुआ समन्दर तूफ़ान की तरह बढ़ा, घोड़ों के टापों और असलहे की झन्कारों से कर्बला का मैदान थर्रा उठा, बहन ने आकर भाई को होशियार किया, भैय्या क्या आराम कर रहे हैं देखिये फ़ौजों ने हमला कर दिया।

हुसैन[अ०] अब्बास से मुख़ातब हुए, ''ऐ भाई तुम पर मैं क़ुर्बान हो जाऊँ ज़रा इनसे एक रात की मोहलत माँगो, बड़ी कोशिश के बाद एक रात की मोहलत मिली, और दुनिया ने उसी एक रात में हक़ परस्तों और बातिल नवाज़ों के फ़र्क़ को देख लिया एक तरफ़ इबादत थी, दूसरी तरफ़ ऐश परस्ती, एक तरफ़ तिलावते क़ुर्आन थी, दूसरी तरफ नाच गाना, एक तरफ़ मुनाजातें थीं दूसरी तरफ क़हक़हे, रात इसी तरह गुज़री।

तारीकियाँ छटीं, नूर फैला, सुब्ह की सफ़ेदी सामने आई, जैसे हक़ की रौशनी बातिल की सियाही काफ़ूर करती है। नमाज़ियों ने मुसल्ले बिछाये, शबीहे पैग़म्बर[स०] ने अज़ान दी, अभी इबादत करने वाले मुसल्लों से न उठे थे कि दुश्मन के तीर जिहाद का पैग़ाम लेकर आए, बूढ़ों ने कमरें कसी, जवान बहादुरी के जोश में झूमे, बच्चों ने ऊँचे हो-हो कर बड़ों के शानों से शाना मिलाया। जंग छिड़ी, हक़ को बाक़ी रखने के लिए क़ुर्बानियाँ दी जाने लगीं, मददगार ख़त्म हो गये, रिश्तेदारों की बारी आई। इमाम[अ०] कभी क़ासिम का लाशा सीने से चिमटाए हुए लाए, कभी औन[अ०] और मुहम्मद[अ०] का बहन को पुरसा दिया, कभी कड़ियल जवान भाई की लाश ख़ैमे तक न ला सके तो ख़ून भरा अलम और छिदी हुई मश्क लेकर, पलटे अली अकबर[अ०] की लाश न उठी तो बच्चों ने सहारा दिया। अली असग़र[अ०] के नाज़ुक गले से तीर खींचा माँ के आँचल की ज़ीनत को क़ब्र के हवाले किया।

अब हुसैन[अ०] मैदान में अकेले हैं, मगर हिम्मत में कमी नहीं, इरादे में सुस्ती नहीं, माथे पर शिकन नहीं, वाह मेरे बुलन्द हिम्मत आक़ा आप ने साबित कर दिया कि हक़ वाला, बातिल से किसी दूसरे के सहारे किसी मदद के भरोसे पर टक्कर नहीं लेता, जैसे-जैसे मुसीबतें बढ़ती जाती हैं हुसैन[अ०] का चेहरा खिलता जाता है। तीरों, तलवारों, नेज़ों का बढ़-बढ़ के इस्तेक़बाल करते हैं, किसी को पेशानी पर जगह दी, किसी को दिल और

जिगर में, किसी की मन्ज़िल पाक सीना हुआ, तो किसी की पहलुए मुबारक, इसी हाल में अस्र का वक़्त आ गया नमाज़ी ने इशारों में नमाज़ शुरु की, माबूद और बन्दे में राज़ो नियाज़ होने लगा हुसैन[अ°] इबादत में लगे हुए थे कि सीने पर नेज़ा पड़ा, नमाज़ी शुक्रिये के सजदे के लिये घोड़े से ख़ाके कर्बला की तरफ़ झुका, आलम में तलातुम हुआ, फ़रिश्तों में गिरया बुलन्द हुआ रसूल[स°] तड़प के बढ़े, अली[अ°] परेशान होकर दौड़े, फ़ातिम[स°] ने बेक़रार होकर गोद फैलायी, ऐ मेरे ज़ख़्मी बेटे, ऐ ख़ून में शराबोर नौनिहाल, आ, आ जलती रेत पर नहीं, मेरी आग़ोश में सर रख।

फ़ातिमा[स°] के घर का चिराग़ कुन्द ख़न्जर से बुझा, आलम में तारीकी फैली, आँधियाँ चली, ज़लज़ले आए, आसमान से ख़ून बरसा, मगर ज़ालिमों का जज़्ब-ए-ज़ुल्म कम न हुआ, साद के लड़के ने कहा सिपाहियों अभी कमरें न खोलना, सवारो अभी घोड़े से न उतरना, ज़ुल्म के तरकश में एक तीर और भी है, अभी मज़लूम के लाशे की पामाली बाक़ी है। घोड़े हुसैन की लाश की तरफ़ बढ़े, बेचारी बहन फ़रियाद करती दोड़ी, ऐ कूफ़े और शाम के ज़ालिमों भाई की जगह बहन को पामाल कर दो मगर बहन रोती रही, चिल्लाती रही, और भाई का लाशा नज़रों के सामने पामाल हो गया, आँधियाँ चलकर रुकीं, ग़ुबार उठकर बैठा, ज़मीन थर्राकर थमी, लेकिन क्या हक़ व बातिल की टक्कर ख़त्म हो गई, ज़ुल्म व इन्साफ़ की लड़ाई ख़त्म हो गई? नहीं अभी बाकी है, सिर्फ़ जंग का अन्दाज़ बदल गया, सिपाही बदल गये, लश्कर का सरदार दूसरा हो गया, अब हुसैन[अ°] लश्कर के सरदार न थे, ज़ैनब[स°] थीं, अलमदार अब्बास[अ°] न थे, उम्मे कुलसूम[स°] थीं। बजाए अली अकबर के अली अकबर की माँ, क़ासिम[अ°] की जगह कुबरा अली असग़र[अ°] की जगह पर सकीना थीं, अब हिफ़ाज़ते हक़ के लिए तलवारें नहीं, दुर्रे खाना थे, तीरों की जगह तमाचे, सर देने के बजाए चादरें दी जा रही थीं, बाज़ू कटवाने के बदले बाज़ू में रस्सी बंध रही थी, जंग ख़त्म नहीं बल्कि और सख़्त और सख़्त हो गई।

जिस तरह आशूर के दिन से पहले आशूर की रात थी, उसी तरह कूफ़ा और शाम के बाज़ारों से पहले शामे ग़रीबाँ आई मगर फ़र्क़ के साथ, शबे आशूर ख़ेमे थे, और उसमें अयादतें थीं, आज की रात जली क़नातें, और उसमें बच्चों की फ़रियादें थीं, शबे आशूर अब्बास तलाया पर थे और आज ज़ैनब ख़ेमे के पास गश्त कर रही हैं, मज़लूम फौज की कमाण्डर ज़ैनब[स°] ने अपनी फौज का जाएज़ा लेना शुरु किया, दो बच्चे कम नज़र आये, बहन से मुख़ातिब हुईं, उम्मे कुलसूम भाई को क्या जवाब दूँगी, दो बच्चे नज़र नहीं आते दोनों बहने तलाश में निकलीं एक नर्म ज़मीन के क़रीब देखा, दोनों बच्चे गलों में बाहें डाले आराम कर रहे हैं, कहा बहन ज़रा आहिस्ता बढ़ना, शायद बच्चे थक कर सो गये हैं, मगर जब क़रीब पहुँचीं तो देखा दोनो बच्चे अपने बाबा के पास जा चुके हैं, ज़ैनब[स°] ने कहा होगा भैय्या दिन भर आप लाशें उठाते रहे अब आपकी बहनें दो यतीमों की लाशें उठाती हैं। भैय्या आप ने तो अली अकबर का लाशा उठाने के लिए बच्चों को आवाज़ भी दे ली थी, ऐ बनी हाशिम के बच्चों आओ भाई का जनाज़ा उठाओ, अब बहन किसको पुकारे, बच्चे भी तो इतना थक चुके हैं कि लाशों में हाथ लगाने का दम न होगा।

खेमें में फिर से मातम की सफ़ बिछी, एक कोहराम बरपा हुआ, मगर ज़ैनब[स°] को अब रोने की फ़ुर्सत भी न थी, आँखों-आँखों में तलाश किया तो उन बयान करने वालों, मातम करने वालों में सकीना[अ°] नज़र न आईं यह अली[अ°] की बेटी हुसैन[अ°] की बहन की हिम्मत थी कि दिन भर की थकी मांदी, टूटी हुई ज़ैनब[स°] फिर ख़ेमे से हुसैन[अ°] की चहीती को तलाश करने निकलीं, कभी दरिया की तरफ़ गईं, शायद चचा याद आ गये हों, कभी शहीदों में आईं, शायद भैय्या के पास चली गईं हों, कभी मैदान की तरफ़ गईं मगर सकीना[अ°] कहीं न मिलीं। एक सवार ने बताया गहराई में एक बच्ची के रोने की आवाज़ सुनी है, ज़ैनब दौड़ी हुई गहराई में गईं, देखा बच्ची एक बिना सर की लाश के सीने पर सर रखे सो रही है। मैं कहता हूँ ऐ सकीना[अ°] यह रात का सन्नाटा, यह कर्बला के जंगल का ख़तरनाक आसमान, यह हर तरफ़ लाशों के ढेर इस हाल में आपका क़दम ख़ेमे से बाहर कैसे निकला, शायद सकीना[अ°] जवाब दें कि तुझे नहीं मालूम जब रात होती है, बच्चे वह जगह तलाश करते हैं जहाँ सोने के आदी होते हैं। मैं बाबा के सीने पर सोने की आदी थी, जब बाबा ख़ेमे में न मिले तो मैंने मैदान में, वह सीना तलाश कर लिया जिस पर सर रख के नींद आ गई।

